तुजुक–ए–बाबरी एवम् तुजुक–ए–जहांगीरी का तुलनात्मक अध्ययन राजनीतिक निरीक्षणकेविशेष सन्दर्भ में

नरेश कुमार (शोधार्थी , इतिहास विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय रोहतक)

सारांश (Abstract) : –

मुगलकालीन इतिहास के स्त्रोत के रूप में मुगलशासकोंकी आत्मकथाओं का अपना एक विशिष्ट महत्वपूर्ण स्थान है। कोई भी दरबारी इतिहासकार बादशाह के कितना ही करीब क्यों न हो वह उसकी कार्यप्रणाली और योजनाओं का मूल्यांकन उतने अच्छे ढंग से नहीं कर सकता जितना बादशाह स्वयं कर सकता है। इसलिए बाबर की आत्मकथा तुजुक–ए–बाबरी औरजहांगीर की आत्मकथा तुजुक–ए–जहाँगीरीमुगलकालीन इतिहास के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं।व्यक्ति जिन परिस्थितियों मे रहता है उसका प्रभाव उसके व्यवहार और उसकी मनोदशा पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इस तथ्य की पुष्टि इन आत्मकथाओं के अध्ययन के बाद स्वतः हो जाती है। बाबर ने जहाँ अपनी आत्मकथा में उस दौर की राजनीतिक अव्यवस्था का वृतान्त प्रस्तुत किया है वहीं जहांगीर की आत्मकथा भी उसके समय की राजनीतिक सुहढ़ता की स्थित को स्वयं प्रकट कर देती है। प्रस्तुत शोध पत्र में मुगलशासकों की आत्मकथाओंको आधार बनाकरइन दोनोंशासकोंके राजनीति सम्बन्धी विचार, प्रशासन,और राजत्व सिद्धान्त का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

संकेत शब्द (Keywords) : – इतिहास,आत्मकथा,मुगलकाल,बाबर,जहांगीर,तुजुक–ए–बाबरी,तुजुक–ए–जहाँगीरी

बाबर व **जहांगीर** की आत्मकथा में वर्णित राजनैतिक पहलू की जब हम तुलना करते हैं तब हमें दोनों की राजनीतिक परिस्थितियों पर प्रकाश डालना होगा क्योंकि परिस्थितियों पर प्रकाश डाले बिना हम दोनों के राजनैतिक विवरण की तुलना नहीं कर सकते।

राजनीति के क्षेत्र में दोनों की परिस्थितियाँ, विचार व समय सीमा अलग–अलग थे और इन्हीं सभी का प्रभाव हमें दोनों बादशाहों की आत्मकथाओं में देखने को मिलता है।

बाबर की आत्मकथा में हम उसे निरन्तर जीवन भर अस्थिरता व राजनीतिक संघर्ष से जूझता हुआ पाते हैं। उनकी आत्मकथा का लगभग एक तिहाई हिस्सा युद्धों का वर्णन है, क्योंकि समस्त जीवन में वह युद्धों से घिरा हुआ था। बाबर अपनी आत्मकथा में फरगना, समरकन्द, काबुल व हिन्दुस्तान में अपने संघर्षमयी व प्रयत्नशील दौर का वर्णन करते है जबकि जहांगीर की आत्मकथा में हमें उनके जीवन की स्थिरता व राजनीति के क्षेत्र में सुदृढ़ता के दौर को पाते हैं।

बाबर अपनी आत्मकथा की शुरूआत फरगना में गद्दी पर बैठने के वर्णन के साथ करता है।[1] फरगना में गद्दी पर आसीन होने से लेकर हिन्दुस्तान में उसकी मृत्यु (1526–1530) तक वह कष्ट व युद्धों से घिरा हुआ था। बाबर की आत्मकथा से ज्ञात होता है कि फरगना की गद्दी उसे आसानी से हासिल नहीं हुई। मंगोल खान के साथ–साथ तैमूर राजकुमार विशेषकर समरकन्द का सुल्तान अहमद मिर्जा फरगना में विशेष रूचि रखते थे।[2] समरकन्द शुरू से ही बाबर के आकर्षण का केन्द्र था। बाबर की आत्मकथा से उल्लेख प्राप्त होता है कि समरकन्द को पाने के लिए बाबर ने कई बार प्रयत्न करने पड़े। सबसे पहले 1497 ई० में बाबर ने समरकन्द पर अधिकार किया[3], परन्तु अधिक दिनों तक नियन्त्रण नहीं रख सका। 1500 में फिर दोबारा समरकन्द पर नियन्त्रण स्थापित किया गया लेकिन इसका परिणाम भी पहले जैसा ही रहा।[4] यह समय बाबर के लिए बड़ा ही कष्टदायक था क्योंकि इस समय वह अपना फरगना का राज्य भी खो चुका था और बाबर की स्थिति राज्यविहिन सम्राट की भांति थी।

तैमूरी सत्ता के चार केन्द्रों में से एक खुरासान पर शैबानी खाँ द्वारा अधिकार कर लिए जाने के बाद मध्य एशिया में बाबर के लिए अपनी शक्ति स्थापित करना कठिन हो गया था।[5] अब बाबर के लिए काबुल के अलावा कोई विकल्प शेष नहीं रहा क्योंकि काबुल की परिस्थितियाँ बाबर के लिए अनुकूल थी, काबुल के शासक उलुंग बेग मिर्जा की मृत्यु पहले ही हो चुकी थी और बिना किसी विशेष प्रयास के 1504 में बाबर ने काबुल पर अधिकार कर लिया। स्वयं बाबर के शब्दों में ''बिना किसी युद्ध, बिना किसी परिश्रम के भगवान की कृपा से मैंने 1504 में काबुल पर अधिकार कर लिया।''[6]परन्तु काबुल पर अधिकार करने के बावजूद भी बाबर ने अभी तक अपने पैतृक राज्य पर शासन करने के स्वप्न का त्याग नहीं किया था।

1511 ई० में शाह इस्माइल सफवी की सहायता से बाबर ने समरकन्द पर फिर से अधिकार करने में सफलता प्राप्त की। परन्तु 1512 ई० में शाह इस्माइल से पराजित हो जाने व उजबेगों के उत्थान से बाबर को समरकन्द छोड़ना पड़ा।[7] अब उसके पास दोबारा काबुल में अपनी स्थिति को मजबूत करने के अलावा कोई विकल्प शेष नहीं रहा था। काबुल की दुर्बल आर्थिक स्थिति व भारत के सम्पन्न संसाधन बाबर के लिए आकर्षण का विशेष केन्द्र थे। इस प्रकार मध्य एशिया की राजनीतिक स्थिति ने बाबर पर दबाव डाला और यह मानने के लिए विवश कर दिया कि वह मध्य एशिया में साम्राज्य स्थापित करने की आशा का परित्याग कर दे और हिन्दुस्तान की तरफ ध्यान दे।

बाबर की आत्मकथा से उल्लेख प्राप्त होता है कि हिन्दुस्तान के पश्चिमी भाग को तैमूर का उत्तराधिकारी होने के कारण वह अपना ही राज्य समझता था। 1519 ई० के वृतान्त में वह लिखता है कि ''क्योंकि मेरी हार्दिक इच्छा सर्वदा हिन्दुस्तान पर अधिकार जमाने की रही है, यह विभिन्न प्रदेश भीरा, खूशआब, चिनाब तथा चीनी ऊत किसी समय तुर्कों के अधीन रह चुके हैं अतः मैं इन्हें अपना ही समझता था और उन्हें चाहे शान्तिपूर्वक तरीके से चाहे युद्ध करके, जिस प्रकार सम्भव होता अपने अधिकार में करना निश्चय कर लिया था।''[8]

सम्भवतः तैमूर की सम्पति पर पैतृक अधिकार व हिन्दुस्तान की राजनीतिक स्थिति ने हिन्दुस्तान आक्रमण की पृष्ठभूमि को तैयार किया। बाबर को हिन्दुस्तान में एक केन्द्रीय सत्ता का अभाव प्राप्त हुआ। स्वयं बाबर इसकी पुष्टि

अपनी आत्मकथा में करता है। हिन्दुस्तान पाँच मुस्लिम शासकों लोदी (केन्द्र) गुजरात, मालवा, बहमनी तथा बंगाल तथा दो हिन्दु शासकों मेवाड़ के राणा सांगा व विजयनगर द्वारा शासित था।[9]

बाबर की आत्मकथा में न केवल उसे मध्य एशिया में ही युद्धों में उलझा हुआ पाते हैं बल्कि उनकी इस रचना का जो भाग हिन्दुस्तान से सम्बन्धित है उसमें भी बाबर को निरन्तर संघर्षशील पाते हैं

पानीपत के युद्ध से पूर्व बाबर ने हिन्दुस्तान पर चार बार आक्रमण किए परन्तु वे आक्रमण शक्ति परीक्षण मात्र थे। बाबर ने मुगल राज्य की स्थापना पानीपत के मैदान में इब्राहीम लोदी को हराकर 1526 ई० में की थी।[10] 1527 ई० में खानवा का युद्ध[11], 1528 ई० में चन्देरी का युद्ध[12] तथा 1529 ई० में घाघरा के युद्ध[13] में विजयी होकर बाबर ने अपने राज्य का विस्तार किया।

अब यदि जहांगीर के सन्दर्भ में चर्चा की जाए तो जहांगीर मुगल वंश का चौथा शासक था। उनकी आत्मकथा से हमें राजनीतिक सन्दर्भ में उनके शासन प्रबन्ध, विजय अभियान, राजत्व व अन्य घटनाओं के बारे में जानकारी मिलती है।

बाबर की भाँति, जहांगीर भी एक महत्वाकांक्षी शासक था। जहांगीर की महत्वाकांक्षा इस बात से स्पष्ट होती है कि अपने पिता के शासनकाल में ही जहांगीर शासक बनने के लिए विद्रोह कर देता है और इलाहाबाद में अपने आप को राजा घोषित करके अपने नाम के सिक्के ढलवायें, जागीरें दी व हर रोज दरबार लगाना शुरू की दिया। हालांकि जहांगीर इस विद्रोह का वर्णन अपनी आत्मकथा में नहीं करते।[14] उसके बाद अपने पिता के सर्वश्रेष्ठ मित्र अबुल फजल की भी वीर सिंह बुंदेला से हत्या करवा दी।[15] इस प्रकार अपने पिता के जीवित रहते हुए स्वयं को राजा घोषित करना उनकी महत्वाकांक्षा की पुष्टि करता है।

जहांगीर जब बादशाह की गद्दी पर बैठता है (1605–1627) तब उसकी राजनीतिक परिस्थितियाँ बाबर की राजनीतिक परिस्थितियों से बिल्कुल अलग थी। बाबर अपना पैतृक राज्य खो चुका था तथा उसे एक नवीन राष्ट्र को विजित करके अपने साम्राज्य की स्थापना करनी थी। बाबर ने हिन्दुस्तान को तलवार के बल पर जीता था स्वयं बाबर इस बात की पुष्टि करता है कि, ''राज्य व दिग्विजय बिना अस्त्र–शस्त्र व साधन के सम्भव नहीं है।''[16] जबकि जहांगीर को राज्य प्राप्ति के लिए कोई संघर्ष नहीं करना पड़ा। उसे यह राज्य अपने पिता अकबर से सुदृढ़ अवस्था में प्राप्त हुआ था। बाबर को हिन्दुस्तान में केन्द्रीय सत्ता का अभाव प्राप्त हुआ जबकि जहांगीर के काल तक मुगल पूरे उतरी भारत पर छा चुके थे। बाबर ने जो युद्ध किए वो अपने साम्राज्य की स्थापना के लिए किए थे जबकि जहांगीर के अभियान राज्य की सुदृढ़ीकरण व विस्तार के लिए थे। यद्यपि जहांगीर की उतर–पश्चिम सीमा असफल रही तथा दक्षिण नीति का भी कोई सुखद परिणाम नहीं निकला। जहांगीर की अदूरदर्शिता के चलते महत्वपूर्ण प्रदेश कंधार भी मुगलों के हाथों से निकल गया।[17] किन्तु इन सब असफलताओं के अतिरिक्त जहांगीर ने कांगड़ा के अजेय दुर्ग को अपने अधीन कर लिया जिस पर अकबर जैसा महान शासक भी विजय प्राप्त नहीं कर सका था।[18] मेवाड़ के साथ शान्ति सन्धि भी जहांगीर के काल की एक प्रशंसनीय घटना थी।[19]

परिस्थितियों को प्रभाव न केवल प्रशासन पर ही बल्कि दोनों बादशाहों के राजत्व के सिद्धान्त पर भी देखने को मिलता है।

आर० पी० त्रिपाठी जिन्होंने मुगल राजसत्ता का गम्भीरता पूर्वक अध्ययन किया। उन्होंने इसे तुर्क मंगोल सिद्धान्त कहा। जिसमें तुर्की व मंगोल दोनों परम्पराओं का मिश्रण था। प्रभुसता संबंधी मंगोल अवधारणा के प्रधान सिद्धान्त के अनुसार साम्राज्य का विभाजन राजा के लड़कों के बीच होता था परन्तु तैमूर ने असीम प्रभुसत्ता की अवधारणा का अनुसरण किया जिसके अनुसार, ''विश्व के इन विस्तृत भू–भागों पर दो राजाओं के लिए जगह नहीं है। ईश्वर एक है, अतः पृथ्वी पर ईश्वर का उपासक भी एक ही होना चाहिए।[20]

बाबर भी राजनीति के क्षेत्र में किसी भी प्रकार की साझेदारी को नकारता है और काबुल में 1507 में पादशाह की पदवी धारण करता है जिसे इससे पहले किसी तैमूर ने इसे ग्रहण नहीं किया था। पादशाह होना बाबर की सर्वोच्चता को सिद्ध करता है।[21]

राजत्व के बारे में बाबर के विचारों का पता हुमायूँ को लिखे गए पत्र से भी मिलता है जिसमें वह लिखता है कि, ''प्रभुसत्ता एक बाध्यता है और साम्राज्य के कामकाज के दौरान विलासता व आराम को दूर रखना चाहिए।'' बाबर ने इस ओर भी इशारा किया है कि अमीरों से सलाह ली जानी चाहिए क्योंकि एकान्तवास बादशाही का सबसे बड़ा दोष है।[22]

बाबर राजसत्ता के पैतृक अथवा वंशानुगत सिद्धांत में विश्वास रखता था और यही दावा करके हिन्दुस्तान को विजय किया। लेकिन राजनैतिक दर्शन में उनके विचारों में विरोधाभास देखने को मिलता है, जहाँ एक ओर वह अपने आप को बादशाह कहलाता है और काबुल में साझेदारी की बात को नकारता है, वहीं दूसरी ओर अपने पुत्र हुमायू को अपने भाईयों के बीच साम्राज्य को बांटने की बात करता है। इस प्रकार राजत्व की अवधारणा के सन्दर्भ में बाबर का दोहरा दृष्टिकोण व्यक्त होता है अर्थात् उसने स्वयं के लिए तो राजत्व को निरकुंश रखा और अपने पुत्र हुमायूं को राज्य में सांझेदारी करने के लिए कहा।

अब यदि जहांगीर के सन्दर्भ में बात करें, जहांगीर अपने पिता की नीति को आधार बनाकर चला। अकबर के शासन काल में मुगल राजत्व के सिद्धान्त को एक स्थाई आधार प्राप्त हो चुका था। अकबर के राजत्व सिद्धान्त को अबुल–फजल ने निम्न शब्दों में व्यक्त किया है, ''ईश्वर की नजरों में राजत्व से बढ़कर कोई चीज नहीं है, व्यक्ति में हजारों अपेक्षित गुण जब तक एकत्रित नहीं हो जाते तब तक यह प्रदान नहीं किया जाता।

राजसत्ता के महत्व को स्पष्ट करते हुए वह आगे लिखता है कि, ''राजत्व ईश्वर से निकला प्रकाश है, सूर्य से निकली किरण है आधुनिक भाषा में इसे फर्र–ए–इज्दी (आध्यात्मिक प्रकाश) और पुरानी भाषा में इसे किवां ख्वारा (उदात प्रभामण्डल) कहते हैं।[23]

अपने पिता के नक्शे कदम पर चलते हुए जहांगीर के अधीन राजत्व का आधार दैवीय बना रहा। अकबर की सहिष्णुता की नीति का समर्थन कर जहांगीर ने न केवल सुलह–कुल की विचारधारा का समर्थन किया, अपितु पीर

मुरीद वाली अपने पिता की परम्परा का भी अनुकरण किया जिसमें शस्त व शबी का सिलसिला (मुरीद के प्रतीक चिन्ह है, बादशाह की तस्वीरें) देना जारी रखा।[24]

मिर्जा नाथन, एक खानजादा जहांगीर के समय मनसबदार के रूप में कार्यरत था। वह जहांगीर के लिए पीर–ओ–मुर्शिद (नैतिकता के गुणों से युक्त सूफी संत) और किवला (मस्जिद का पश्चिमी हिस्सा जिसके सामने नमाज अदा की जाती है) जैसी शब्दावली का प्रयोग किया नाथन के बीमार होने पर स्वप्न में अध्यात्मिक राजनैतिक जगत के बादशाह के दर्शन होने पर स्वस्थ हो जाना इस पीर मुरीदी परम्परा की मजबूत आधारशिला दिखाने वाला साक्ष्य है।[25]

जहांगीर राजत्व को ईश्वर द्वारा दी गई भेंट समझते थे। वह अपनी आत्मकथा में इस कथन की पुष्टि करते हुए कहता है कि, ''न्यायशील ईश्वर ये कार्य ऐसे लोगों को सुपुर्द करता है जिनको वह उच्च कर्तव्य के लिए उपयुक्त समझता है।[26] जहांगीर स्वयं को ईश्वर की छाया मानते थे।[27] जहांगीर ईश्वर के समक्ष अपनी सर्वोच्चता दिखाने के लिए झरोखा दर्शन देता था तब लोग उसे देखकर 'बादशाह सलामत, बादशाह सलामत' कहते थे।[28]

जहांगीर अपने पिता की भाँति सूर्य का उपासक था। राज्यरोहण के बाद जहांगीर ने जो पहले सलीम के नाम से जाना जाता था 'नूरूद्दीन जहांगीर' नाम धारण किया। नूर का अर्थ है, प्रकाश या ज्योति। इस उपाधि धारण करने के तुजुक–ए–जहांगीरी में दो कारण बताए गए हैं उनमें एक कारण नूर अथवा प्रकाश की भव्यता और दूसरा कारण भारतीय ऋषियों की उस मान्यता को देता है जिसके अनुसार अकबर के बाद राज्य को चलाने वाला व्यक्ति नूरूद्दीन होगा।[29] प्रकाश के प्रति जहांगीर का प्रेम इस बात से स्पष्ट होता है कि वह अपनी प्रत्येक प्रिय वस्तु के आगे नूर शब्द का प्रयोग करता है जैसे नूरअफसा–बाग, नूर–ए–बख्त, नूरजहानी मोहर आदि। जहांगीर ने अपनी बेगम मेहरूनिसा को भी नूरजहां का नाम दे रखा था।[30] इससे नूर के प्रति जहांगीर की श्रद्धा प्रकट होती है।

इस तरह बाबर व जहांगीर के राजत्व सिद्धान्त में एक अन्तर दिखाई देता है जहां बाबर राजसत्ता के वंशानुगत अधिकार में विश्वास रखते थे, वहीं जहांगीर राजसत्ता के दैवीय अधिकार में विश्वास रखते थे। लेकिन दोनों का उद्देश्य राजसत्ता में अपनी सर्वोच्चता दिखाना था।

राजसत्ता की एक अन्य महत्वपूर्ण रूकावट शक्तिशाली अमीर वर्ग की उपस्थिति थी। बाबर अमीरों के साथ घुलता–मिलता था, उनके साथ मदिरा गोष्ठी करता था और अपने पुत्र हुमायूं को भी यही सलाह देता था कि अमीरों से परामर्श लेता रहे क्योंकि बाबर उन पर प्रतिबंध लगाकर स्वय के अस्तित्व को खतरे में नहीं डालना चाहता था।[31] लेकिन जहांगीर ने अमीरों पर कड़े प्रतिबन्ध लगाए जिनका उल्लेख उनकी शासन काल के छठे वर्ष में प्राप्त होता है जिसमें वो झरोखा नहीं दे सकते, अपने अफसर व सहायकों से पहरा नहीं दिलवा सकते, हाथियों की लड़ाई नहीं करवा सकते, किसी अपराधी का अंग नहीं काट सकते व किसी को बलात् मुस्लमान भी नहीं बना सकते और अपने सेवकों की उपाधियां भी नहीं दे सकते थे आदि।[32] इस तरह जहांगीर ने अमीरों की एक सीमा बांध रखी थी। लेकिन जहांगीर के शासनकाल के अंतिम वर्षों जहांगीर के अस्वस्थता के समय अमीर वर्ग का पूर्ण प्रभुत्व दिखाई देता है।

राजनीति के क्षेत्र में जहांगीर की पत्नी मेहरूनिस्सा जो इतिहास में नूरजहां के नाम से जानी जाती है का व्यापक प्रभाव देखने को मिलता है। नूरजहाँ ने अपने परिवार के साथ मिलकर एक गुट बना लिया था जिसे नूरजहांनी चौकड़ी कहा जाता था। बादशाह की अस्वस्थता की स्थिति में उसका प्रभाव ओर भी अधिक व्यापक हो गया। नूरजहां का प्रभाव तो राजनीति के क्षेत्र में इतना अधिक बढ़ गया था कि कभी–कभी नूरजहां झरोखा दर्शन भी देती थी और राज्य के सभी प्रशासनिक कार्य वहीं संभालती थी। यहाँ तक कि नूरजहां ने अपने नाम के सिक्के भी ढलवा दिए थे। और फरमान भी नूरजहां के नाम से ही निकलते थे। अपने शासनकाल के अन्तिम दिनों में बादशाह की स्थिति इतनी खराब हो गई थी कि उन्हें शराब व कवाब के अलावा कुछ नहीं सूझता था।[33] महाबत खाँ का विद्रोह भी जहांगीर के शासन काल की कोई कम महत्व वाली घटना नहीं थी। महाबत खाँ ने जहांगीर व उसके बाद नूरजहां को बन्दी बना लिया था। लेकिन बाद में नूरजहां की सूझ–बूझ ने सब ठीक तो कर दिया लेकिन इससे शाही गौरव को बहुत धक्का लगा। ये सभी पहलू बादशाह पर अमीरों के पूर्ण प्रभाव को दर्शाता है।[34]

दोनों ही आत्मकथाओं से हमें दरबारी शिष्टाचार का भी उल्लेख मिलता है। दरबारी शिष्टाचार बादशाह के पद सोपान व सत्ता को दर्शाता है। बाबरनामा के अध्ययन से पता चलता है कि अमीर या फिर अन्य लोग जब बादशाह से मिलते थे तो घुटनों के बल झुक कर अभिवादन करते थे।[35] स्वयं बाबर का भी पायन्दा सुल्तान बेगम व खदीजा बेगम के सामने घुटनों के बल झुक कर अभिवादन किए जाने का वर्णन मिलता है।[36] जब बादशाह किसी अमीर को खिलअत[37] प्रदान करता था तो वह तीन बार घुटने टेक कर अभिवादन करता था।[38] बाबर के परिवार की महिलाएं जब काबुल से आगरा आई तब बाबर की बेटी गुलबदन बेगम ने भी अपने आप को मुलाजिमत की भाँति बादशाह के सामने पेश किया। मुलाजिमत का अर्थ दरबारियों द्वारा खुद को बादशाह के सामने हाजिर करना होता है।[39]

अब यदि तुजुक–ए–जहांगीरी के सन्दर्भ में बात की जाए तो उसमें हमें बाबरनामा की अपेक्षा शिष्टाचार के बारे में विस्तृत उल्लेख मिलता है। तुजुक–ए–जहांगीरी के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि दरबार में खड़े होने का एक विशेष नियम होता था। दरबार–ए–आम मे तीन कटघरे थे जिनमें लोग अपनी पदवी के अनुसार खड़े होते थे।[40] जब बादशाह दरबार में आता था तो लोग नियमानुसार अभिवादन करते थे जहांगीर की आत्मकथा से हमें कुर्निश, तस्लीम, सिजदा[41] व चौखट चुम्बन किए जाने का उल्लेख प्राप्त होता है।

आईन–ए–अकबरी से भी हमें कुर्निश तस्लीम व सिजदा के बारे में जानकारी मिलती है। जब बादशाह किसी को खिलअत मनसब, हाथी, घोड़ा या अन्य उपहार देते थे तो लेने वाला तीन बार तस्लीम करता था और अन्य अवसरों पर एक बार तस्लीम की जाती थी।[42] बाबर व जहांगीर दोनों दी बादशाह काफी उपहार देते। अत्यधिक दान देने के कारण बाबर को कलन्दर के नाम से जाना जाता था।[43]इस तरह दरबार में एक शिष्टाचार होता था, जो बादशाह की स्थिति को अन्य लोगों से सर्वोच्य दर्शाता था।

दोनों ही आत्मकथाओं में वर्णित राजनीतिक पहलू की तुलना करने पर सामान्य यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बाबर व जहांगीर दोनों की राजनीतिक परिस्थितियों में कोई समानता देखने को नहीं मिलती। इन

परिस्थितियों का प्रभाव राजनीति के प्रत्येक पहलू पर देखने को मिलता है। बाबर के सामने एक नए देश में साम्राज्य को स्थापित करने की समस्या थी, और वह उसी तरफ प्रयत्नशील था।

इसलिए परिस्थितियोंवश व समय के अभाव के कारण वह कुछ नया परिवर्तन या कुछ ऐसा नहीं करना चाहता था जिससे उसके अस्तित्व का खतरा पहुंचता। इसके विपरित जहांगीर को साम्राज्य अपने पिता अकबर से सुदृढ़ अवस्था में विरासत में प्राप्त हुआ था।

सन्दर्भ : –

---

[1] जहीरूद्दीन मुहम्मद बाबर, *बाबरनामा (मेमवार्स ऑफ बाबर),* अनु. ए. एस. बेवरिज, भाग–1, लो प्राइस पब्लिकेशन, दिल्ली, पुनर्मुद्रित 1989, पृष्ठ– 1

[2] बाबर, *बाबरनामा,* भाग–1,पृष्ठ–34

[3] उपरोक्त, पृष्ठ– 86

[4] उपरोक्त,पृष्ठ–131–135

[5] बाबर, *बाबरनामा,* भाग–1, पृष्ठ– 332–334

[6] उपरोक्त, पृष्ठ– 199

[7] उपरोक्त पृष्ठ–352–358

[8] उपरोक्त पृष्ठ–380

[9] बाबर, *बाबरनामा,* भाग–2, पृष्ठ–481

[10] उपरोक्त, पृष्ठ–468–475

[11] उपरोक्त, पृष्ठ–558

[12] उपरोक्त, पृष्ठ–592–594

[13] उपरोक्त, पृष्ठ–674

[14] बेनी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ जहांगीर, इलाहबाद, द इण्डियन प्रेस प्रा0 लि0, पांचवां संस्करण, 1962, पृष्ठ–45–46

[15] नुरूद्दीन जहांगीर, *द तुजुक–ए–जहांगीरी,* अनु0 अलेक्जैण्डर रोजर्स, सम्पादित हेनरी बेवरीज, लो प्राईस पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पुनर्मुद्रित, 1989, भाग–1, पृष्ठ–24–25

[16] बाबर, *बाबरनामा,* भाग–2,पृष्ठ–525

[17] जे० एफ० रिचर्ड, *द मुगल एम्पायर,* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1993, प्रथम भारतीय संस्करण 1993, पृष्ठ– 112

[18] जहांगीर, *तुजुक* भाग–2, पृष्ठ–183–185

[19] उपरोक्त भाग–1, पृष्ठ–272–273

[20] आर० पी० त्रिपाठी, *सम ऑस्पैक्ट*पृष्ठ–105–108

[21] बारब, *बाबरनामा,* भाग–1, पृष्ठ–344

[22] उपरोक्त, भाग–2, पृष्ठ–626

[23] अबुल फजल, *आईन–ए–अकबरी,* अनु. एच. ब्लॉकमैन, स० डी० सी० पिल्योट, क्राउन पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1988, भाग–1 पृष्ठ–2–3

[24] जहांगीर, *तुजुक,* भाग–1 पृष्ठ– 60–61

[25] जे. एफ. रिचर्ड, '*द फार्मुलेशन ऑफ इम्पीरियल अथोरिटी अण्डर अकबर एण्ड जहांगीर*' : सम्पादित रिचर्डस, *किंगशिप एण्ड अथोरिटी इन साउथ एशिया,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली 1988 पृष्ठ–309–312

[26] जहांगीर, *तुजुक,* भाग–1, पृष्ठ–53

[27] उपरोक्तपृष्ठ–372

[28] बेनी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ जहांगीर, पृष्ठ– 83, एडवर्ड टेरी, *अर्ली ट्रेवल्सइन इण्डिया,* सम्पादित विलियम फोस्टर, लो प्राईस पब्लिकेशन, दिल्ली, पुनर्मुद्रित 2007 पृष्ठ–326

[29] जहांगीर, *तुजुक,* भाग–1, पृष्ठ–3

[30]बेनी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ जहांगीर, पृष्ठ–162–163

[31] बाबर, *बाबरनामा,* भाग–2, पृष्ठ–626

[32] जहांगीर, *तुजुक,* भाग–1, पृष्ठ–205

[33] बेनी प्रसाद, *हिस्ट्री ऑफ जहांगीर*पृष्ठ–177–178

[34] उपरोक्त, पृष्ठ–364–387

[35] बाबर, *बाबरनामा,* भाग–2,पृष्ठ–459

[36] उपरोक्त, भाग–1, पृष्ठ–301

[37] खिलअत एक समान्नसूचक एक विशेष शाही वस्त्र था जिसे शासक अपने अधिनस्थ अधिकारियों को पुरस्कार स्वरूप देता था।

[38] बाबर, *बाबरनामा,* भाग–2, पृष्ठ–408

[39] हरबंस मुखिया, *द मुगल्स ऑफ इंडिया,* ब्लैकवैल पब्लिशिंग विले इंडिया प्रा0 लि., पुर्नमुद्रण, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ–79

[40] जहांगीर, *तुजुक,* भाग–1,पृष्ठ–242

[41] उपरोक्तपृष्ठ–337
कुर्निश में दाहिने हाथ की हथेली मस्तक पर रखकर सिर को झुकाकर अभिवादन किया जाता था। **तस्लीम** में झुककर दाहिने हाथ का पिछला भाग जमीन पर रखा जाता था और उसे धीरे–धीरे उठाकर सीधे खड़ा होकर हथेली को सिर के उपर रखना पड़ता था। **सिजदा** का अर्थ सम्राट के सामने दण्डवत लेट जाना है। यह परम्परा केवल ईश्वर के सामने निभाई जाती थी।

[42] अबुल फजल, *आईन–ए–अकबरी,* भाग–1, पृष्ठ–167

[43] मुखिया, *द मुगल्स*पृष्ठ–72